।। अध्याय तृतीय ।।

मोहन राकेश के एकांकियों का वस्तु

१) प्रस्तावना :

प्रो॰ चन्द्रकिशोर जैन कहते है, "हिन्दी साहित्य में एकांकी नाटक पाश्चात्य अनुकरण की देन है।"[१] तो जैनेंद्रकुमार का कथन है "हिन्दी एकांकी पर पाश्चात्य एकांकी का प्रभाव पडा है।"[२] वैसेही अमरनाथगुप्त का कथन है - "हिन्दी साहित्य में एकांकी अभी हाल में लिखे जाने लगे है। अंग्रेजी आने से पहले ऐसे एकांकी न थे।" अर्थात एकांकी का विकास सही रूपमें आधुनिक काल मे ही हुआ है और जैसे - जैसे उसका विकास होता गया वैसे - वैसे उसके वस्तु में भी हमें बदलाव नजर आने लगा है। जिस प्रकार प्राचीन नाटकों का उद्देश्य सिर्फ मनोरंजन करना ही था उसी प्रकार एकांकी का प्राथमिक स्वरूप मनोरंजनात्मक ही दिखाई देता है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में एकांकी नाटकों की शुरुवात मुख्त: भारतेन्दु कालमें ही हुई और इन एकांकियों का उद्देश्य जनजागर तथा कुप्रथाओं को व्यंग्यरूप में प्रस्तुत करना ही रहा है।

सुधारवादी युगमें एकांकियों का वस्तु जन-जागरण करना रहा है। अपने राष्ट्र के प्रति प्यार बढाना तथा देशहित की ही कृति करना और नैतिक विचारधारा को बचाकर रखना आदी महत्वपूर्ण वस्तु रहा है। इस वस्तुरूप में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई देता। जयशंकर प्रसाद के पदार्पण के बाद हिन्दी नाट्य साहित्य को एक नया मोड मिलता है। उन्होंने अपने अनेक एकांकियों के द्वारा इतिहास की विभिन्न कडियों को जोडने का काम किया है। प्रसादजी के एकांकीयो के बारे में तो डॉ॰ नरेंद्र का कथन है - "सचमुच हिन्दी का प्रारंभ प्रसादजी के "एक घूंट" से हुआ है। प्रसादपर संस्कृत का प्रभाव है, इसीलिए वे हिन्दी एकांकी के जन्मदाता नहीं है, यह बात नहीं है। एकांकी के टेकनीक का "एक घूंट" मे पूरा निर्वाह हुआ है।"[३] इसप्रकार उनके एकांकियों में भारतीय संस्कृति को प्रकट करना, भारतीय रूढि, परंपरा एवं मान्यताओं को प्रस्तुत करना आदि उनके एकांकियों का वस्तु सामने आता है। आगेचलकर विविधता के कारण कहीं कहीं बाह्यसंघर्ष और व्यक्तिके अन्तर्द्वंद्व को भी स्पष्ट किया है।

सन १९३८ में "हंस" का "एकांकी विशेषांक" प्रकाशित हुवा जिसने एक बडे वाद विवाद को जन्म दिया। उससमय अनेक नाटककारों के मन में जो प्रश्न थे वे उभरकर सामने आए। काफी विवाद हुआ और उसके बाद एकांकी का प्रचार बडे धूम-धाम के साथ होता हुआ नजर आता है। द्वितीय विश्वयुध्द के बाद युध्द की विभीषिका, लोकतंत्र, समाजवाद, साम्यवाद, आदि को लेकर एकांकी उभरआयी इन्ही विषयों को लेकर आनेवाले प्रमुख एकांकीकार है; श्री उपेन्द्रनाथ अहक, जगदीशचंद्र माथुर, सेठ गोविंददास, लक्ष्मीनारायण मिश्र, भगवतीचरण वर्मा, विष्णुप्रभाकर तथा सदगुरु शरण अवस्थी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तो एकांकी रचना का क्षेत्र औरभी विस्तृत होता हुआ दिखाई देता है। अनेक एकांकी आज अनेक कॉलिजों, विश्वविदयालयों एवं नाटयसंस्थाओं के दूवादा खेले जा रहे है और इसीकारण आज आधुनिक युग में एकांकियों के विषय में भी भारी परिवर्तन हो रहा है। सामाजिक, नैतिक, देशभक्ती और यथार्थवाद के साथ जीवन की विभिन्न पहलुओं को छूनेवाले एकांकी आज उभर रहे है। ऐसी एकांकियोंका लेखन करनेवालों में है - डॉ॰ धर्मवीर भारती, विनोद रस्तोगी, प्रभाकर माचवे, कमलेश्वर, भारतभूषण अग्रवाल आदी। ऐसे मान्यवर एकांकिकारों में अपना एक अलग स्थान निर्माण किए हुये थे मोहन राकेशजी। जिन्होने अपने एकांकियों के दूवारा पारिवारिक समस्या, स्त्री- पुरुष के टूटते संबंध एवं आधेअधूरे मनुष्य की कहानी का यथार्थ चित्रण अपने एकांकियों के माध्यमसे किया है।

मोडन राकेशजी के दो एकांकी संग्रह है (१) अंडे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज नाटक और (२) रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक। दूसरा संग्रह रेडिओ एकांकी है, परंतु थोडासा परिवर्तन करके इसे रंगमंचपर प्रस्तुत किया जा सकता है। यह दोनों एकांकी संग्रह उनके मरनोपरान्त प्रकाशित हो चुके है।

"अंण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीजनाटक" संग्रह में अण्डे के छिलके, सिपाही की माँ, प्यालियाँ टूटती है, बहुत बडा सवाल, और शायद तथा हंः। बीजनाटक एवं "छतरियाँ" नामक एक पार्श्वनाटक भी शामिल है, जो राकेशजीकी उत्तुंग प्रतिभाशक्ति का प्रतीकमान है।

"रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक" संग्रह में आठ ध्वनि नाटक है। रेडिओ पर प्रसारित होनेवाले नाटकों में ध्वनि की प्रधानता होती है इसलिए ऐसे नाटकों को ध्वनिनाटक कहा गया है। परंतु आजकल डॉ॰ जयभगवानगुप्ता जैसे रेडिओ एकांकी एवं नाटक के विद्वान ध्वनिनाटक और रेडिओ में फर्क कर रहे हैं। वे ध्वनिनाटक को रेडिओ नाटक मानते ही नहीं। परंतु राकेशजीने इस संग्रह में सम्मिलित सभी एकांकियों को रेडिओ के लिए ही लिखा था। इस संग्रह में, रात बितने तक, स्वप्नवासवदत्तम, सुबह से पहले. उसकी रोटी, कुँवारी धरती, आषाढ का एक दिन, दूध और दात तथा आखिर चटटान तक ऐसे कुल मिलकर सात एकांकी तथा ध्वनिनाटक सम्मिलित है।

"संकलित ध्वनिनाटकों में " आषाढ का एक दिन, उसकी रोटी, आखिरी चटटान तक, रूपांतरीत ध्वनिनाट्य है। "स्वप्नवासवदत्तम" वसंत बापट के संस्कृत रेडिओ नाट्यन्तर का राकेश द्वारा किया गया हिन्दी अनुवाद है। शेष सभी ध्वनि नाटक संभवत: रोकेश के ही कहानियों के नाट्यरूपांतर है यदयपि इस विषयमें पक्की सुचना का अभाव है।" परंतु फिरभी कथ्य की दृष्टिसे इन नाटकों में मार्मिकता, यथार्थता, एवं मानवी जीवन के व्यंग्यपर किया हुआ कडा प्रहार निश्चित रूपसे सामने आता है। अत: निश्चित ही हिन्दी साहित्य जगत में मोहन राकेशजी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

"अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीजनाटक" संग्रह की समीक्षा करते हुए विष्णुकांत शास्त्री ने अपना मन्तव्य इस प्रकार प्रकट किया है " "मोहन राकेश के छोटे नाट्यप्रयोगों का यह संकलन नाटयकार के रूपमें उनकी समग्र प्रतिभा को उजागर करने के लिए उनके बडे नाटकों के पूरक के रूपमें अपरिहार्य है। यह संकलन न केवल उनकी नाटययात्रा का बल्कि वैचारिक यात्रा का भी सुचक है। क्योंकि इसमें कुछ एकांकी नाटक जहाँ उनकी आरंभिक कृतियाँ प्रतीत होती है वहाँ पार्श्वनाटक "छतरियाँ" उनके जीवन काल की अंतिम रचनाओ में से एक है। कितना अच्छा होता यदि प्रत्येक रचना के अन्त में उसका रचना काल (वास्तविक या अनुमानित) दे दिया गया होता। राकेश की यह यात्रा उल्लास से विषाद की ओर, विशेष से

सामान्य की ओर, सरलता से जटिलता की ओर ह रही है। राकेश की स्निग्ध जीवंतता और परिवर्तन की प्रतिबध्दता क्रमश: कैसे आंतरी उदासी और बाहरी छलना से आस्थाहीन छटपटाहट में बदलती चली गयी है, इसका कुछ आभास भी इन रचनाओंसे मिल सकता है।"[४]

२) "अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीजनाटक" में सम्मिलित एकांकियों का कथ्य निम्नप्रकार से प्रस्तुत है।

* अण्डे के छिलके

"अण्डे के छिलके" यह एकांकी एक पारिवारिक वातावरण को लेकर आनेवाली हास्य एकांकी है। एक ऐसा परिवार जिसमें एक ओर प्राचीन संस्कारों की प्रबलता है, तो दूसरी ओर आनेवाले नए परिवर्तनो का प्रभाव। इन दोनों का आपसी टकराव प्रस्तुत करना राकेशजी का प्रमुख उद्देश रहा है। लेकीन संस्कारों, मर्यादा और अंधविश्वासो की ओर में छिपे आडम्बर दुराव-छिपाव के राकेश पक्षपाती नही लगते। वे स्वाभाविक ही समझते हैं। और इसीलिए इस परिवारीक समस्यांओंको हास्य के रूप मे प्रस्तुत किया है।

इस एकांकी में माँ और माधव (बडा भाई) प्राचीन संस्कारों से प्रभावित है ऐसा एक अंदाज है। परिणामस्वरूप वीणा को छोड एकांकी का हर एक पात्र नये परिवर्तन को छुपकर ही प्रस्तुत करते है; जैसेकि, श्याम को अंडा खाना है, गोपाल को सिगारेट पीना हो अथवा राधा को चंद्रकांता पढना हो। श्याम अंडे का नाम तक लेना नहीं चाहता, परंतु माँ से छुपकर अण्डा खाना तो पसंद करता है क्योंकि उसे अंडा भी खाना है और माँ से प्यार भी लेना है, इसलिए वह कहता है - "हमें अपने अम्मासे भी प्यार है और अपने खुराक से भी।"[५] राधा बहु को रामायण, महाभारत के अलावा चंद्रकांता तो पढ़ना है परंतु सबकी नजरें चुराकर परिणामस्वरूप वह रात को मोमबत्ती जलाकर या दरवाजा बंद करके चंद्रकांता पढती है। गोपाल को सिगारेट पीने की आदत है परंतु वह सबसे बचकर पीना चाहता है अर्थात परिवर्तन के संघर्ष में मानव की मानसिक दशा को प्रकट करना राकेशजी का एक उद्देश दिखाई देता है।

जब इस एकांकी का हर पात्र परिवर्तन की जंजीर से जकड कर छिपकर परिवर्तन का स्विकार करना पसंद करता है तब माधव (बडा भाई) आखिर इन सब की खोखली सभ्यता का पर्दा फाश करते है वह कहता है - "भैया सब जानते, राजा ! वे यह भी जानते है कि तुम्हारे बायें हाथ की उँगलियाँ किस तरह पीली हुई है। यह भी जानते है कि श्याम बाबू का दूध कमरे में क्यों जाता है और यह भी जानते है उनके सो जानेपर बेबी मोमबत्ती जलाकर कौनसी किताब पठा करती है।"[७] आगे माधव कहता है - "क्यों नहीं जानती ? अम्मा तो शायद मेरी वे बातें भी जानती है जो मै समझता हूं कि वे नहीं जानती। इन संवादों से लेखक को इस बात को भी स्पष्ट करना है कि - " आज भी किस हलके- फुलके अंदाज से पुराने लोग प्राय: साबित कर देते है कि नए छोकरों - छोकरियों की हरकतों - हिमाकतों को वे खूब जानते है, मगर अमर से विशेष कृपा यह करते हैं कि अभी उसका पता भी नहीं लगने देते।"[८]

इसप्रकार राकेशजी अण्डे के छिलके एकांकी के द्वारा आपसी मतभेद है लेकिन किसी भी प्रकार का गहरा विद्रोह नहीं, कटुता नहीं। इसी तथ्य को हास्य के रूपमें प्रस्तुत करना इस एकांकी का मुख्य कथ्य है और राकेशजी इसमें सफल हुए है।

(२) सिपाही की माँ।

इस एकांकी में माँ की ममता और बेटे के प्रति तडप का भाव दिखाना मोहन राकेश का मुख्य उद्देश रहा है। प्रस्तुत एकांकी में एक माँ (बिरानी) है जिसका बेटा (मानक) युध्द के मोर्चेपर है। और उसने बहुत दिन से न कोई खत भेजा है, न उसकी कोई खबर मिली है। परिणामस्वरूप माँ (बिरानी) बेचैन है, और भले बुरे सपने देखती है। शरणार्थियों से युध्द की विभीषीका और सैनिकों की वीरता की जो सूचनाएँ बिशनी को मिलती है, उससे उसका उद्देश अधिक ही बढता है। अपने बेटे की कुशलता के हेतू भगवान से बार - बार प्रार्थना करती है - " ताती लगाई पार ब्रहम सहाई, राखनहार राखिआ, प्रभु व्यधि मिराई।"[९]

इसप्रकार एक बेबस, बूढी ममतामयी, जो भय की अजीब कशमकश से जूझती माँ को दिखाना इस एकांकी का मुख्य कथ्य है। साथ ही "युध्दविरोधी साहित्यिक अभियान"[१०] प्रस्तुत करना लेखक का एक और उद्देश्य दिखाई देता है।

इस एकांकी के कथ्य के संबंध में जीवनप्रकाश जोशी का कथन है - यहाँ माँ की ममता का चित्रण मर्मस्पर्शी तो है मगर इससे भी कहीं जादा तो वह अन्यत्र अनेक कृतियो में है। अतः इसदृष्टिसे उसमें कोई नयापन नहीं है। इस नाटक के कथ्य कथन के अंदाज में एक बासीपन है, एक थकपन लगता है वस्तु मेंव्यजना से वाक में, व्यक्तित्व-चित्र में एकघिसापिटापनाहाँ, जिसे घटियापन नहीं कहा जा सकता।"[११]

जीवनप्रकाश जोशी का यह कथन वैसे सही तो है ऐसा हम मान सकते हैं। परंतु जिन्होने "आधे - अधुरे", "आषाढ का दिन" जैसे चिरस्मरणीय नाटक लिखा है। ऐसे नाटककार अपने कथ्य में कमजोर है यह मानने को दिल नहीं करता। वैसे देखा जाय तो हर एक साहित्यिक अपनी प्रतिभा और अन्य साहित्यिक मूल्यो में अपने लेखन काल के प्रारंभमें छोटा ही होता है। राकेशजी का यह एकांकी लेखन भी प्रारंभ की कृति है परिणामतः इसमें कुछ त्रुटियाँ तो संभव है। अतः उसे घिसापिटापन कहना उचित नहीं लगता।

साथ ही राकेशजी "कुन्ती" नाम के पात्र दृवारा यह दर्शाना चाहते है कि - समाज में ऐसे बहुत से लोक हैं जो सदैव अनहोनी और दुःखद और समाज विघातक बातेही करते हैं। यह एक उनका कथ्य हमारे सामने उभर आता है। उसीप्रकार दो सिपाहीयों के बर्ताव के दृवारा यह भी दिखाना चाहते है कि - युध्द में सिपाहियों के सामने सिर्फ अपने विरोधी सिपाही को मारना यही लक्ष रहता है, उन्हें -हृदय की धडकने उससमय समझ में नहीं आती। इसीलिए मानक आखिर अपने पंजें में आए सिपाही को गोली मार देता है। इसप्रकार राकेशजी माँ की ममता और उसकी अपने बेटे प्रति तडपने, युध्दविरोधी विचार, समाज के खोखले लोक आदि की प्रस्तुतिकरण करने में सफल हुए हैं। अर्थात अपने कथ्य मे वे सफल बन पडे है।

(३) प्यालियाँ टूटती है :

मोहन राकेश कृत "प्यालियां टुटती है" एकांकी आज के अधुनातन सत्य को उजागर करने का काम करता है। समय बदलने के साथ - साथ हमारी जीवन पध्दति भी बदल रही है। खोखलापन और बनावट हमारे जीवन के अंग बन रहे हैं, यही नहीं, आपसी संबंध भी किस तरह बिखरते -टुटते जा रहे हैं। इसका ज्वलंत प्रस्तुतिकरण इस एकांकी में हमें दिखाई देता है। साथ-साथ नयी पीढी और पुरानी पीढी के बीच के अंतर की ओर भी राकेशजी ने संकेत किया हुआ है।

"दीवानचंद पुरानी पीढी के प्रतिनिधि है जिन्हें अमीर बने मीरा और माधुरी (जो नये पिढी के प्रतिनिधि है) बगल देना चाहती है, यदयपि उनकी सहानुभूति दीवानचंद से है। इस विपन्नवस्था में भी दीवानचंद अनाथ बेटी को अपनी पोषिता बना लेते है, पर वह साहस मीरा और माधुरी नाहीं दिखा पाती क्यांकि माधुरी के पति भोलानाथ संकीर्ण -हृदय के नही बल्कि -हृदयहीन स्वार्थि व्यक्ति है।" इतना ही नाहीं दीवानचंद की पोषिता बेटी को वे भिखारी कहते है। इसप्रकार राकेशजी यह स्पष्ठ करना चाहते है कि आ नयापन के जंजीर में जकडी नयी पीढी आर्थिक दृष्टिसे तो अमीर बनती जा रही है परंतु अमीरी के साथ-साथ मन की संकीर्णता भी बढती जा रही है।

आज के अधुनातन समाज में मन की संकीर्णता के साथ कृत्रीम सभ्यताएँ भी बढ रही है। यह राकेशजी का एक और वक्तव्य है। इस कृत्रिम सभ्यता के कारण जितनी दिखावटी सौंदर्य बढाने की कोशिश की जा रही है उतना ही अधूरापन बढता जा रहा है, अविश्वास बढ रहा है। - माधुरी कहती है - "फिरभी उस औरत का कुछ नहीं कहा जा सकता। तुम्हारे सामने मुसकराती रहेगी और हर चीज देखकर "हाऊनाईस" "हाऊ ब्यूटीफूल" कहती रहेगी। बादमें दूसरे लोगों के सामने तरह - तरह का मजाक उडायेगी।"[13] इसपर मीरा कहती है - "तुम्हे तो खाजखाह कॉप्लेक्स है, दीदी। अपनी अच्छी से अच्छी चीजपर भी तुम्हें भरोसा नहीं होता।"[14] अर्थात यह स्पष्ट है कि कृत्रिम सभ्यता में जितनी भी कृत्रिमता बढाईए वह सब बिना "प्रेम" के अधूरा सा है। और यही बात स्पष्ट होती है, इस एकांकी के आखरी संवादों से। माधुरी कहती है - " कितनी मनहूस छाया है इनकी ? यह छाया मेरे दिमाग से निकलती क्यों नहीं ? मेरे शरीर में एक घिनौनी सिहरन भर जाती है और ..... मुझे ....मुझे अपना आप भी मनहूस लगने लगता है - बेहद मनहूस।"[15] अर्थात कृत्रीमता के बदले और कृत्रिमता में सुख ढूंढने के बदले सच्चा प्यार और दिल की बडप्पन से मनुष्य जीवन सुखी बन सकता है। इस वक्तव्य को राकेशजी स्पष्ठ करना चाहते है।

इस एकांकी के संबंध में गिरीश रस्तोगी लिखते है - "समय बदलेने के साथ मनुष्य की मनोवृत्ति को बदलना राकेश को अस्वाभाविक नहीं लगता वह जरूरी है और स्वाभाविक भी है। पुरानी पीढी और नयी पीढी के संघर्ष को अनिवार्य मानते हुए भी राकेश प्राचीनता को नकारते नहीं। उनके आगे के नाटकों के तीखे द्वंद्व का मुह कारण यही विवशता है। संकेतोंसे काम लिया गया है, भले ही वे सूक्ष्म नही - "

- प्यालियाँ तो टुटती ही रहती है, पुरानी चीज तबाह हो तभी तो नयी आती है।" प्यालियों का टूटना और संवादों मे उसका कथन इतना दोहराया गया है की वह एक बहुत घिसी- पिटी निर्जीव या स्थूल संकेत सा लगने लगती है।"[१६]

(४) बहुत बडा सवाल:

यह एकांकी राकेश की विकासमान प्रतिभा को स्पष्ठ करनेवाला एकांकी है। इस एकांकी के द्वारा आज के मध्यमवर्गीय समाज व्यवस्थापन पे करारा व्यंग कराना चाहते हैं और उनका मुख्य उद्देश्य और कथ्य यही रहा है।

"निम्न मध्य को के बाबू लोगों की स्थिति आज जड शिथिल और ढुलमुल हो गई है। मात्र बातो में समय व्यय करने की उन्हें आदत है, परिस्थिति के साथ बिना संघर्ष किए, बिना जूझे वे सुख सुविधाओं की आशा करते है। इस एकांकी का कथानक ऐसे सुविधाभोगी निम्न-मध्यवर्गीय बाबूओं से संबंधित है। लेखकने आधुनिक युग की नारेबाजी, समितियों के संचालकों के छल-कपट आदि का वास्तविक चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। प्राय: लोगों को समय का महत्व नहीं है। वे मीटींग में घंण्टो देर से आते है और आते ही निरर्थक कार्य व्यापार में समय नष्ठ करते हैं।" ऐसे ही लोगोंपर राकेशजीने करारा व्यंग्य किया है। राष्ट्रीयस्तरपर ऐसे और इसतरह के अन्य बहुत बडे बडे सवाल मुँह बाँधे खडे है, लेकिन समस्या यह है कि "बहुत बडा सवाल" एकांकी की तरह फिलहाल ये सवाल है, जबाब यहाँ नहीं है - यहाँ है सिर्फ निरर्थक प्रस्ताव····· बहसे ····· कोरम की खानापुरी और फिर अन्तमें वहीं मुँह बांधे खडा सवाल वह भी उलझा हुआ"[१७] यही सत्य कथ्य के रूपमें राकेशजी को प्रस्तुत करना है।

इस एकांकी में, लो ग्रेड वर्कर्स वेलफेयर सोसायटी के मेम्बर है - शर्मा, मनोरमा, संतोष, गुरप्रीती, कपूर, मोहन आदि जो आपस में मीटिंग करके सरकार से यह माँग करना चाहते है कि वे ऐसे कर्मचारियों के लिए मकान बनवाए। परंतु मिटींग के शुरू के लिए बहुत इन्तजार करना पडता है। क्योंकी धीरे धीरे एक - दो करके मीटींग के लिए विराजते है। इसके बीच समय व्यय के लिए गप्पा लगाए जाती है। मूँगफली चाय मँगवायी जाती है और थोडे देरबाद मिटींग में मुख्य विषय के बदले सिर्फ बहस ही बहस। इतनाही नहीं बीच बीच में निरर्थक और खोखले शब्दोंपर हँसी उडाई

जाती है। हिन्दी को तोडा मरोडा जाता है। जैसे, अध्यक्ष को अधि अक्ष कहना और सदस्य को सदसिय, त्यागपत्र को तिभागपत्र कहना आदी। बहस के दौरान एक - दुसरे के चरित्रपर भी व्यंग्य कसा जाते है। और अंत तक मिटींग में कोई भी निर्णय नहीं लिया जाता और सभी सदस्य एक- दो करके चले जाते है। इसप्रकार पूरी एकांकी निरर्थकता का बोध कराता है, और दर्शकों के सामने एक बहुत बडा सवाल निर्माण होता है।

इसतरह से मध्यवर्गीय की निरर्थकता को, उनकी बौध्दिक कमी एवं आलसी प्रवृत्ति पेश करना इस एकांकी का कथ्य रहा है। साथ ही श्याम भरोसे और राम भरोसे इन दो पात्रो के द्वारा यह स्पष्ठ करना चाहते है कि - मध्यमवर्ग सिर्फ कुडा करना जानते है और साफ करने की जिम्मेदारी निम्नवर्गपर आ पडती है। यह सब ऐसा क्यों ? इसी विचार को राकेशजी कथ्य के रूपमें स्पष्ठ करना चाहते है। इस आशय के संबंध मेंही गिरीश रस्तोगी लिखते है - "जाहीर है कि मध्यमवर्ग की निष्क्रियता, जडता और हलकी मनस्थिति के प्रति राकेश के मनमें गहरा विक्षोभ और विरोध है, साथ ही उस वर्ग की क्रियाशक्ति के प्रति अविश्वास भी, क्योंकि इस वर्गने इतकी गंदगी और इतना कूडा फैलाया है जिसे शायद निम्नवर्ग साफ कर सके हालाँकी वह भी यह नहीं जानता कि कैसे ?"[१८]

उसीप्रकार इस एकांकी की शुरवात - "इतनी धूल क्यों उडाता है ? अहिस्ता से नहीं झाडा जाता रोज - रोज की धूल से पेशतर पहले ही खाये हुए है।[१९] और अंत "अब सीधा हो जा। बहुत कूडा कर गये है। साफ करना है। अर्थात प्रारंभ और अंत झाडू लगानेसे हुआ है और इसमें सांकितिकता है कि समाज के मध्यवर्ग की कितनी भी समस्याएँ मिटाने की कोशिश कीजीए वह नहीं मिटेगी, उल्टा बढती ही जा रही है। लगता है उसे भी राकेशजी ने एक कथ्य के रूपमें प्रकट किया है और यह पूर्ण सत्य है।

* बीज नाटक

"अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज नाटक" संग्रह मे दो बीजनाटक सम्मिलित है। जिनके नाम है"शायद और हंस"। पूर्ण नाटकों को लिखते - लिखते राकेश ने कुछ छोटे नाटयप्रयोग भी किए जो धर्मयुग में प्रकाशित हुए। बीज नाटक के

संदर्भ में मोहन राकेशजी ने कोई संकल्पना तो प्रस्तुत नहीं की है। परंतु इन दो बीज नाटकों के कथ्य और शिल्प को देखते हुए यह कहा जा सकता है की "आधे-अधूरे" में मूर्त परिवार विघटन, अजनबीपन, अकेलापन मूल्य विघटन आदि बातों का संक्षिप्त सही इन दो नाटकों में बीज रूप में प्रस्तुत हुआ है। इससे कहा जा सकता है कि ये दोन नाटक आधे - अधूरे के बीज नाटक ही है।"[20] जीवन प्रकाश जोशी लिखते हैं - "ठीक नहीं कहा जा सकता की बीज और पार्श्व विश्लेषणों को लगाकर यह नाटककार अपने प्रयोगों की किन विशेषताओं की सार्थकता सिध्द करना चाहता था। इसका तदनुकूल जायजा तो शायद ब्रहमा ही ले सकेंगे। मगर संक्षेप में, मेरी समझ में "बीज नाटकों" से मतलब, रचनात्मक सर्वेक्षण, समीक्षण के स्तरपर, आज के उसतरह के नाटकों से होगा, जिनमे भाषा संवाद "कामनकीपिटिस" सम्मत हो, और तदनुकूल कथ्य भी आधुनिक "आपपूहम" हो। [21] डॉ॰ गिरीश रस्तोगी का कहना है - "समकालीन संत्रास को अपने लघु आवरण में समेटने की शक्ति ही मानो उसका बीज रूप है, जिसमें उसी को विस्तार देने की संभावनाएँ निहित है।"[22] विष्णुकांत शास्त्री के अनुसार बीजनाटक एक देसी विधा है, जो बीज रूपमें व्यक्तियों के संबंधी या स्थितियों की करालता को रेखांकित किया जा सके। [23]

उपर्युक्त विद्वानों के विचारों को देखने के बाद यह निश्चित हो जाता है की शायद और हं: आज के मुलभूत समस्या पर लिखे गए नाटक है। जिसमें स्त्री पुरुष के बीच के मानसिक तनाव, साथ-साथ ऐसे समस्याओं को लेकर जीने की विवशता घुटन और सबसे जादा ऐसी समस्याओं को प्रकट कर सकते में मन की मजबूरी आदि बातों को इन दो बीज नाटकों में दिखाई देता है।

* पहला बीजनाटक : शायद;

"शायद" इस बीजनाटक को ध्यानपूर्वक पढने के बाद एक महत्वपूर्ण कथ्य सामने आता है वह है, आज का मध्यवर्गीय मनुष्य आधुनिकता के चक्कर में पूरीतरह से फँसा जा रहा है, शायद उसी के कारण उसके निरन्तर उब को, खालीपन, नीरसता और रिक्तता को किस तरह से महसुस कर रहा है। इसका यथार्थ चित्रण करना ही इस बीजनाट्य का मुख्य ह कथ्य रहा है।

विष्णुकांत शास्त्री इस बीजनाट्य के संबंध मे अपना मन्तव्य इसप्रकार प्रकट करते है, "शायद की रचना "आधे-अधूरे" के बीजरूप में हुई है। इसमें लेखक ने मध्यमवर्गीय मनुष्य का अभिशप्त जीवन, असंतुष्ठता, वर्तमान जीवन की उब, घुटन, पेचीदगी, अकेलापन पारिवारिक विघटन, मानवीय मूल्यों का -ह्रास आदि बातों को उजागर किया है।"[२६]

इस बीज नाटक में दो पात्रों का "स्त्री और पुरुष" एक परिवार है। जो अपने वैवाहिक जीवन में सुख-शांति चाहते है, परंतु न जाने क्यों ? वे अपने को असहाय्य समझ रहे है। यही नाटक के शुरू में ही प्रकट होता है। स्त्री कहती है - "फिर सोचने लगे" अर्थात निश्चित रूपसे छटपटाहट, घुटन है, जो पुरुष को चैनसे नहीं रहने देती। पुरुष को लगता है कि जब वह अकेला था तब भी उब ही थी। अब अपना घर है, स्त्री है तब भी वह भी ऊब में ही है। स्त्री अपनी तरफ से बार बार कोशिश करती दिखाई देती है कि पुरुष की उदासी कम हो। लेकिन पुरुष कहता है, "पता नाहीं क्या है मेरे अन्दर.....किस चीज की उदासी बनी रहती है हर वक्त ?"[२६] और वह अपने आप को अपराधी महसूस करती है। उसे लगता है कि वह अपने जीवन के इतिहास के इतिहास को वह बार बार दोहरा रहा है। अपनी उदासी मिटाने के लिए वह अपने को दफ्तर में व्यस्त रखना चाहता है, जिससे सोचने को वक्त न मिले। वह अंदर की उदासी और खालीपन मिटाने के लिए बार बार अनेक कार्यक्रम बनाता है, जैसे सुबह जाना, फिल्म देखना, पहाडपर चले जाना, तो कभी विदेश जाने का सोचता है। परंतु वह आखिर यहीं सोचना है कि वहाँ जाकर क्या होगा ? जिंदगी को फिरसे दोहरना। वहीं हीले, पहाड, नदीयाँ, समुद्र, सडके, लोग, घर और बिल्डिंग। अर्थात पुरुष कोई एक नयापन चाहता है परंतु उसे वह नहीं मिल रहा है। कुछ भी करलो खालीपन ज्यों की त्यों बना रहा है और इस उदासी कारण उन दोनों को अपना मेच्योर होना लगता है। शायद मेच्योर आदमी दुखी होता है और जादा सोचना भी दु:खी होने का एक कारण है।

स्त्री बताती है कि - "तुम्हारा मन हमेशा उन चीजों के लिए भटकता है, जो तुमसे दूर है पास होने पर चाहे तुम उन्हे देखोगे भी नही ...[२७] इस प्रकार पुरुष का खालीपन, उदासी यहाँ स्पष्ट है। स्त्री आगे चलकर यह भी कहती है - "पता नहीं क्यों तुम इतना सोचते हो ? तुम्हारी तरह मैं भी तो हूँ अर्थात उस पुरुष की तरह स्त्री भी कबूल करती है कि वह भी उदास है, और खालीपन को महसूस कर रही है।

आखिर पुरुष कहता है - "मै सोचता हूँ, कि हर आदमी को अपनी अलग अलग जिंदगी होनी चाहिए ...! बिना घर बार के।"[२८] इसप्रकार दोनों ही अपने आपको संतुष्ठ करने के अनेक मार्ग सोचते है, परंतु यह नहीं जानते कि यह रिक्तता कैसे पुर्ण हो। अत: इसप्रकार यह नाटक "आज की मानवीय स्थिति का, मानवीय जीवन में संवेदना और आपसी लगाव असंतोष को, अनिश्चय और विवशता का संकेत ही करता है। इस प्रकार राकेशजी भी अपने कथ्य में सफल हुए है।"[२९]

* बीज नाटक : हं:

हं: राकेशजी का दूसरा बीज नाटक है। इस बीज नाटक के द्वारा राकेशजी यही दर्शाना चाहते है कि, मानवीय संबंधो और मूल्यों के टूटने से आज का मानव मन का रोगी बन गया है। वह बाहरी इलाज एवं नींद की टिकियाँ लेकर अच्छा नहीं हो सकता। उसके लिए आवश्यक है मानवीय मूल्यों तथा संबंधो को सुधारना। यही इस बीजनाटक का मुख्य कथ्य है।

इस बीजनाटय में भी दो पात्र है, ममा और पपा। जो अपने ही बच्चो से तिरस्कृत एवं समाज में भी अकेले है। पपा मरीज है और उन्हे मिलने अब कोई नहीं आते। बेटी और जमाई उसी शहर में है परंतु वे कहते है।"...किसी और दिन आयेंगे।[३०] बेटा (हजॉगीर) लंदन में है जिसकी चिठ्ठियों का पपा को इन्तजार है। हालाँकि चिठ्ठियो में भी "कि पपा को वेल्फेयर होम में भेज दो ... पपा अब कूडा हो गया है। इसे डस्ट बिनमें फेंक देना चाहिए।"[३१] ऐसा लिखा होगा, ऐसा लगता है। इसप्रकार पपा का अपने बेटों पर से विश्वास उठ गया है। ऐसी नैराश्य और दर्दनाक स्थिति में पपा दिनों - दिन सिर्फ तारीखें गिनते हुए दिन गुजार रहे है। ममा भी "आधे अधूरे" की नायिका की तरह स्वयं घर चलाती है। वह कहती है, "तुम्हें कभी पता भी न चलने दिया ... कि कैसे करती हूँ, कहाँ से करती हूँ। कौन मुझे महिना भेजता रहा है।[३२] मम्मा भी पपा की तरह उब गई है, वह कहती है," मुझसे अब नहीं होता पपा... अब नहीं होता मुझसे... मेरे सिर में आज कल इतना दर्द रहता है कि ..।"[३३]इस प्रकार सारे मानवीय संबंध टूट चुके है। व्यक्ति अपने को उत्तरादायी न मानते हुए अपने अन्तर्द्वंद्व को, स्वयं अपने को स्पष्ठ करता हुआ, खोजता हुआ, निजी अस्तित्व के लिए छटपटाता हुआ दिखाई देता है और आज की परिस्थितियों में यह खोज मानवीय निराशा और द्वंद्व को ही जन्म देती है।

इसतरह से यह बीजनाटक आज के जीवन का नग्न यथार्थ की तस्वीर खींचता हुआ, भयानक वास्तविकता का साक्षात्कार करता हुआ दिखाई देता है। इसतरह से बदलते जीवन मूल्यों, मान्यताएँ, जीवन का खोखलापन, नयी पीढी और पुरानी पीढी का वैचारिक संघर्ष और ऐसी स्थितिमें शापित बन रहा मानव अपनी सारी करुणा, असहाय्यता, हं: के द्वारा प्रकट करता है। और राकेशजी भी अपने कथ्य में सफल बने है।

* पार्श्व नाटक : छतरियाँ ;

"छतरियाँ" पार्श्वनाटक राकेशजी को एक नये रूपमें प्रस्तुत करता है। नाट्यक्षेत्र में राकेशजी ने हरबार कुछ नया कर दिखाने की कोशिश की है। बीज नाटक के बाद "पार्श्वनाटक" यह उनका एक नया प्रयोग है। वह अपने आप में पूर्ण सशक्त और सार्थक दिखाई देता है। क्योंकि इस नाटक में मंचपर पात्रोंद्वारा न संवाद बोले जाते है, न स्थितियाँ दिखाई जाती। सभी स्थितियाँ नेपथ्य से आनेवाली विभिन्न प्रकार की ध्वनियों एवं नेपथ्य से कहे जानेवाले संवाद से होती, और इस नाटक का सारा क्रिया व्यापार पूर्ण होता है। कहा जाता है कि राकेशजी का यह अंतिम नाटक है। जो राकेशजी को नाटयक्षेत्र में एक अत्युच्च ऊँचाईपर ले जाता है।

इस पार्श्वनाटक के कथ्य की ओर जब हम ध्यान देते तो, आज की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक समस्याओं, विडंबनों से घिरा हुआ, और इन्हि समस्याओं में धक्के खाता लाचार मानव का चित्रण करना ही इस पार्श्वनाटक का मुख्य कथ्य रहा है। डॉ॰ गिरीश रस्तोगी लिखते है, "राजनीतिक हलचलोंसे रूखा फीका पडता जीवन, मिटता हुआ सांस्कृतिक जीवन, इकाइओं मे उबलती हुई चेतना वर्तमान की यही संकुल पृष्ठभूमि छतरियाँ की है।"[34] अर्थात आज के सामान्य मानव का जीवन नीजी अस्तित्व ही समाप्तसा हो रहा है। वह हर एक संकटमें ही भटकता जा रहा है। पार्श्वनाटक के शुरु में ही सुनाई देता है "संकट का अर्थ है मूल्यों को लेकर उठते प्रश्न, प्रश्नो का अर्थ है विचारों की महामारी, महामारी का अर्थ है मनुष्यता से हस्ता मुनुष्य जीवन, और मनुष्य जीवन का अर्थ है ..।"[35] और इतने में ही रंगमंचपर ठोकर मारकर मनुष्य को धकेल दिया जाता है। अर्थात मनुष्य न चाहते हुए भी आज की अनेक समस्याओंका शिकार बन रहा है।

रंगमंचपर कोने में रंगबिरंगी छतरियाँ है। जो प्रतीकरूपमें रंगमंच को आकर्षक बनाती है। यह छतरियाँ "छलना" का प्रतीक रूप है। और इन छतरियों को पाने की कोशिश मानव बार बार करता है। वास्तविक इन छलनाओं से (राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक आर्थिक आदी) सिर्फ मानव छला जाता है, उसके हाथ कुछ भी नही लगता। इन सबमें वह सबसे बडी छतरीको छूने की कोशिश करता है परंतु गोली दागने के अलावा उसके हाथ कुछ नहीं लगता फिर भी बहुत प्रयत्न करने के बाद कुछ छतरियाँ हाथ लगती है। साथ साथ "राजनीतिक उतार चढाव, साहित्यिक आन्दोलन, आर्थिक हेरफार, आर्थिक धर-पकड, सभाएँ, सम्मेलन, जुलूस, हडताल[35] इन सबमें घेरा जाता है। परंतु इस समय राकेशजी मुनुष्य के "इच्छा शक्ति एवं निर्णय क्षमता" को महत्व देते। "निर्णय इस सबका विरोध करने का। और उस सबका विरोध करने का जो इस सबका विरोध करता है।[36] मनुष्य इन सभी छलनाओं में जकड जाने के कारण छुटकारा पाने की कोशिश करता है परंतु सफल नहीं होता और उसकी स्थिति विदूषक सी हो जाती है। आखिर छतरी को फेंककर उसे कुचलने का प्रयत्न करता है पर छतरी ही उसे विरोध करती हुई कुरती में भी मानव को हरा देती है। इतने में अन्य लोग अन्य छतरियों को लेकर नाचने लगते है। यह देखकर यह मानव ईर्षा से आग बबूला हो जाता है और फिरसे छतरी लेकर नाचने लगता है। अर्थात आज का मनुष्य अनेक संकटों का सामना करते करते थककर वह कटपुली सा बन गया है।

इस प्रकार कटपुतली बने मानव का धार्मिक उपदेश, नैतिकता से उसका विश्वास उड गया है। राष्ट्र, राष्ट्रीय संकट, राष्ट्रीय प्रसारण राष्ट्रीय समस्या जैसे शब्द उसे खोखले, सारहीन लग रहे है। इसलिए तो अन्ततः सुनाई देता है," कई कई सवाल सामने आते है। और उनमे हर सवाल कई कई दूसरें सवालों की तरफ ले जाता है। सवाल सब अपने में बहुत अहम है, पर वक्त की जरूरत उन सब सवालों मे अहम है। हमें सबसे पहले इसी सवालपर गौर करना है कि वह जरूरत क्या है, किस चीज की है ? क्योंकि अगर हम अपनी असली जरूरत को समझ ले तो बहुत से सवालों का जबाब खुद -बखुद हासिल हो जाता है।"[37] परंतु मनुष्य असली जरूरत को ही पहचान ने में धोका खा रहा है, और मुक्ति के लिए छटपटाता रहा है। यह एक कटय हमारे सामने उभर आया है। इसे ही आखिर राकेशजी ने "भरत वाक्य" केद्वारा निम्नप्रकार से प्रस्तुत किया है। जैसे;

"भाषा नहीं शब्द नहीं भाव नहीं,
कुछ भी नहीं।
जिज्ञासाएँ डसती हैं बार-बार
कब तक, कब तक, कब तक, इस तरह ?
क्यों नहीं और किसी भी तरह ?
आकार हीन, नामहीन,
कैसे सहूँ, कब तक सहूँ,
अपनी यह निरर्थकता ?
जीवन को छलता हुआ, जीवन से छला गया।
कैसे जीऊँ, कब तक जीऊँ,
अनाथास उगे कुकुर-मुतासा ?
पहचान मेरी कोई भी नहीं आज तक।
लुढकता एक ढेलेसा
नीचे, नीचे, और नीचे,
मैं क्या हूँ, मैं क्यों हूँ ?
भाषा नहीं, शब्द नहीं, कुछ भी नहीं।"[३८]

* रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक : संग्रह का कथ्य;

यह ध्वनि नाटकों का संग्रह मोहन राकेश के मरणोपरान्त प्रकाशित हो चुका है। इसमें कुछ मिलकर आठ ध्वनि नाटक है। रात बीतने तक, सुबह में पहले, कुंवारी धरती, उसकी रोटी, आषाढ का एक दिन, तथा आखिरी चट्टान तक। इस संग्रह के संदर्भ में समीक्षा करते हुए विष्णुकांत शास्त्री ने लिखा है - " मोहन राकेश निश्चय ही प्रथम श्रेणी के नाटककार थे। इस दृष्टिसे उनकी समस्त कृतियों का मरणोत्तर प्रकाशन योग्य है। .....इस संकलन का मूल्य नवीन, परिष्कृत कृतियों की दृष्टि से न होकर कृतिकार के गौण साहित्यिक प्रयासों के साक्ष्य की दृष्टि से है।.....राकेश अपनी कृतियों के परिष्कारपर बहुत ध्यान रखते थे। ऐसी स्थिति में जिन कृतियों को उन्होंने अपने जीवनकाल में प्रकाशित नहीं कराया उनके संबंध में एक धारणा यह भी हो सकती है कि उन्हें यह अपनी प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं मानते हो। इस संकलन का पहला ध्वनिनाटक

"रात बीतने तक" इस धारणा की पुष्टि करता है।[३९] विष्णूकांत शास्त्रीजी के इस मत से हम पूरीतरह से सहमत नहीं है। क्योंकि "रात बितने तक" जैसी कृति उनके लायक नहीं है यह एक बार मान्य कर लेते हैं परंतु आषाढ का एक दिन, कुंवारी धरती और आखिरी चट्टान तक जैसी कृतियाँ आज ही नहीं तो भविष्य में भी कई दिनों तक इसका प्रस्तुतिकरण होता रहेगा। क्योंकि उन कृतियों का कथ्य और उद्देश्य की गहराई इतनी लंबी है कि बस्स! सबको चाहने लायक है।

इस संग्रह में सम्मिलित सभी ध्वनिनाटक आकाशवाणी के लिए अर्थात रेडिओ के लिए लिखे गए है। परंतु आज कल रेडिओनाटक और एकांकियों में फर्क किया जा रहा है। किंतु राकेशजीने इन ध्वनिनाटकों का निर्माण सिर्फ रेडिओ के लिए किया है इसलिए हम रेडिओ एकांकियों के नामें ही स्वीकार करते है।

रेडिओ नाटको का भी मूलतत्व ध्वनि ही है। परंतु फिर भी इन ध्वनिनाटकों में थोडा बहुत परिवर्तन करके रंगमंचपर पेश करने लायक बना सकते है। "इन नाटकों में कथानक के अनुकूल वातावरण की निर्मिति, दृश्य योजना, दृश्य परिवर्तन और भावाभिव्यक्ति के लिए विभिन्न ध्वनियों की योजना वादयंत्रों या अन्य उपकरणों की सहाय्यता सेही की जा सकती हैं। तथा इसमें रेल, वाहन, टेलिफोन, आँधि, तूफान वर्षा आदि प्रकार की ध्वनियों का प्रयोग भी सहजता से किया जा सकता है। नाटक का यांत्रिक या यांत्रिकृत स्वरूप जो दृश्य न होकर श्रव्य होता है उसे ही ध्वनि नाटक कहलाया जाता है।[४०]

* रात बीतने तक *

संत ज्ञानेश्वरजी ने कहा है, जब मनुष्य भौतिकविकास के साथ अध्यात्म को लेकर चलता है तभी वह पूर्ण सुखी बन सकता है। क्योंकिभौतिक विकास से बाह्यांग सुधार जाता है परंतु अंतरंग के सुधार के लिए अध्यात्मक की ही आवश्यकता अनिवार्य है।" इसी विचार को राकेशजी ने "रात बीतने तक" इस ध्वनिनाट्य के द्वारा प्रस्तुत किया है।

यह ध्वनिनाट्य "भ॰ गौतम बुध्द का आध्यात्मकवाद और भ॰ गौतम बुध्द के सौतेले भाई की पत्नी सुन्दरी का भोगवाद" इन दो वादों का संघर्ष इस ध्वनिनाट्य में प्रकट हुआ है।

सुन्दरी बुध्द के बढते प्रभाव का प्रतिकार करने के लिए कामोत्सव का आयोजन करती है। इस आयोजन में नर्तकी का नृत्य चलता रहता है, और ऐसे मादक वातावरण में राजकुमार नंद मुग्ध हो जाता है। सुन्दरी के हाथ से दिए हुए मदिरा का रातभर सेवन करता रहता है। सुबह होने का ध्यान भी उसे नहीं रहता। रातभर नृत्य करने के बादभी वह नर्तकी को नृत्य करने की आज्ञा देता है। परंतु इसी समय नर्तकी (चंन्द्रिका) को "धम्म शरणं गच्छामि। बुध्द शरणं गच्छामि। संघं शरणं गच्छामि" का स्वर सुनाई देता है और नर्तकी इन्ही स्वरो में सुर मिलाते हुए चली जाती है।

इसी बीच म॰ बुध्द भिक्षा लेने राजकुमार नन्द के द्वार आते हैं। उन्हे भिक्षा नहीं मिलती, बिना भिक्षा के वे चले जाते है। इसी बीच नन्द सो जाना चाहता है और वह सोते ही उनके कानोंपर किसी के घृणास्पद हास्य का शब्द सुनाई देता है, और राजकुमार नन्द जाग उठता है। घृणास्पद हास्य का स्वर नंद का ही है परंतु वह ध्वनिक्षेपकों के द्वारा लिया है परंतु लेखक को इस आवाज से यह स्पष्ठ करना है कि जब जब मनुष्य अंधकार मे फँस जाता है तब- तब उसकी अन्तरआत्मा असे सजग करती रहती है। राजकुमार नन्द सुन्दरी के मादक सौन्दर्यमें डुबे रहे और यह भोग सुख क्षणीक है, इससे बाहर निकलना आवश्यक है। इसका इशारा अंतरमन देता रहता है। और नाटककारने यह एक महत्वपूर्ण कथ्य के रूप में पेश किया है।

आखिर राजकुमार नन्द कहता है - नहीं, सुन्दरी! अब प्रभात हो गया है।[४१] और वह म॰ गौतम बुध्द के संघमें भिक्षुक बनते है और एक दिन स्वयं भिक्षुक बने नन्द सुन्दरी के द्वारपर भिक्षा लेने आते हैं। स्वयं राजकुमार को भिक्षुक मंडली में देखकर सुन्दरी छटपटाती है। सुन्दरी का अपने आप पर से विश्वास उठ जाता है। सुन्दरी को किसी के सहारे की जरूरत महसूस होती है, तब भिक्षुक बने नन्द कहते है, "सहारा लेने के लिए स्वयं आगे बढो सुन्दरी! भिक्षुकोंके शब्दों में शब्द मिलाओ। तुम्हें अपने आप सहारा मिल जायेगा"[४२] इसप्रकार आखिर सुन्दरी भी, "धम्मं शरणं गच्छामि। बुध्दं शरणं गच्छामि। संघं शरणं गच्छामि। इन्ही शब्दो में शब्द मिलाती है।

इस कथन से नाटककार को यह स्पष्ठ करना है कि - धन संपत्ती काम से ज्यादा, त्याग में ही सुख है। अर्थात पाश्चात्य की भोग संस्कृतिपर भारत के त्याग संस्कृति का विजय दिखलाना नाटककार का मुख्य उद्देश्य और कथ्य रहा है।

* स्वप्नवासवदत्तम् *

यह ध्वनिनाट्य वसंत बापट के संस्कृत के ध्वनिनाट्यरूपांतर का राकेश के द्वारा किया गया हिन्दी अनुवाद है। अर्थात राकेशजी को कोई खास कथ्य इस नाटयकृति के द्वारा स्पष्ठ करना है यह तो हम नहीं मानते। संस्कृत से हिन्दी में रूपांतर करते समय अपने कुछ विचारों को कही गढा है इसका भी कोई संदर्भ नहीं मिलता है।

ध्वनि नाटकों का प्रसारण राष्ट्रीय नीतियों के अनुसार चुने गये नाटकों का ही होता है। इस दृष्टिसे कथ्य हमारे सामने उपस्थित होते हैं।

राष्ट्र प्रमुख का या राजा का प्रथम कर्तव्य होता है अपने राष्ट्र का रक्षण करना। यदि राष्ट्रप्रमुख या राजा अपने सुख विलासों में ही घूमता फिरें, अपने स्वार्थ के इर्द-गिर्द ही मँडराता रहे तो ऐसे राजा को अपने राष्ट्र के प्रति जो कर्तव्य है उसका ध्यान कराना सहयोगियों का नैतिक कर्तव्य है। इसी कथ्य को खासतौरपर मूल नाटककार "भास" को कहना होगा। मोहन राकेशजी भी यहीं विचार से प्रभावित होकर वसंत बापट द्वारा निर्मित ध्वनिनाट्य रूपांतर का हिन्दी में अनुवाद किया होगा।

वत्सराज उदयन अपनी पत्नी महाराणी वासवदत्ता के सौंदर्य से पागल होकर अपने राष्ट्र के प्रति कर्तव्य को भूल जाता है, और परिणामस्वरूप उसका राज्य शत्रु के हाथ में चला जाता है। तब यौगन्धरायण जैसे अनेक मंत्रियों ने मिलकर चक्रव्यूह की रचना करते हैं और वासवदत्ता के स्वप्न में फँसे राजा को जगाते है, उसको अपने राष्ट्र के प्रति कर्तव्य की याद दिलाते है। परिणामस्वरूप आखिर राजा उदयन अपने शत्रूओं को पराजित कराता है इसप्रकार "भीरू और दुर्बल लोग हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहते हैं और केवल साहसी लोग ही राज्यश्री का उपभोग करते है।"[४३] इस विचार को प्रस्तुत करते है।

* सुबह से पहले ;

यह ध्वनिनाटक राकेशजीने १९४२ के स्वतंत्रता संग्राम को लेकर लिखा है। स्वतंत्रता संग्राम में अनेक वीर जवान अपने प्राणों की बलि क्यों न देनी पडे ? पर देश स्वतंत्र्य होना आवश्यक है इसी विचार से पागल बने थे। इसी घटनाओं को काल्पनिकता का आधार देकर राकेशजीने "सुबह से पहले" ध्वनिनाट्य का निर्माण किया है।

१९४२ के स्वतंत्र्यता संग्राम में अनेक देशप्रेमी नव जवान अपनी भारत माँ को विदेशियों के पंजेसे मुक्त करने के लिए अपना बलिदान देने के लिए तैयार थे। भारत माँ की स्वतंत्रता ही उनवीरों का प्रथम ध्येय और कर्तव्य बन चुका था। इसी कथ्य को राकेशजी को इस ध्वनिनाट्य के द्वारा प्रस्तुत करना है।

संग्राम में अहिंसात्मक क्रियाओं के जरिए विदेशी सत्ता उखाड फेकने की कोशिश करनेवाले "राज" जैसे लोगों का एक पक्ष। तो प्राणों की बाजी लगाकर, देश संपत्ती बचाए रखते हुए परंतु अहिंसा के मार्ग से स्वतंत्रता की चाह रखनेवाले "महेंन्द्र" जैसे वीरों का एक पक्ष ऐसे दो मतप्रवाह स्वतंत्र्यता संग्राम थे।

जब "राज" डाकखाना लूटकर वहाँ का सामान ले जा रहा था, तभी पुलिस उनका पीछा कर रही थी। इसी समय महेंन्द्र भी वहाँ से गुजर रहा था। महेंन्द्र वह सामान लेकर गाढने की जिम्मेदारी स्वयं पर लेता है, और सुबह होने तक राज के घर ठहरना सही मानकर राज के घर आता है। परंतु राज के भाई भाभी को महेंन्द्र चोर लुटेरा लगता है और वे उसे रात १०.३० बजे ही घर से निकाल देते है। उससमय बाहर पुलिस है, बारिश भी शुरू है, फिर भी अपने देश की खातिर स्वयं के प्राणों की चिंता न करते हुए वह चला जाता है। बाहर गया राज जब आता है और उसे यह समाचार मिलता है कि, महेंन्द्र घर में नही तो वह उसे ढूँढने निकलता है वह भी धोबी मुहल्ले से नहीं तो दुसरे रास्ते से।

राज बाहर गया था वह कहीं छुपने के लिए नहीं तो पुलिस की नजरे चुराकर भाग निकलने के लिए कौनसा रस्ता खाली है यह देखने के लिए। अब राज देखकर आया है कि सिर्फ धोबी मुहल्लों में ही पुलिस नहीं है और वह महेंन्द्र को लेकर भाग जाने के लिए उसे बुलाने आता है परंतु जब उसे मालूम होता है कि महेंन्द्र घरपर नहीं तो वह भी धोबी मुहल्लो से नहीं तो दुसरे रास्तों से महेंन्द्र को ढूँढने निकल जाता है।

इसप्रकार राकेश जी इस कथ्य को स्पष्ट करना चाहते है कि स्वतंत्र्यता संग्राम मे वीर जवान संकट सामने है यह मालूम होते हुए भी अपने देश की खातिर उस संकट का सामना करना पसंद करते थे।

रहस्यमय वातावरण के साथ १९४२ की घटनाओं को सही ढंग से प्रस्तुत करने में राकेश जी सफल हुए हैं।

* कुंवारी धरती ;

यह ध्वनिनाट्य आज के मध्यवर्गीय स्थितिपर आधारित है। आज की आधुनिक सभ्यता के विचार मध्यवर्ग तक पहुँच रहे है, और ऐसे विचारों का अनुकरण तो दुसरी तरफ भारतीय सभ्यता का गहरा पगडा। इन दोनों के बीच मध्यवर्गीय समाज पिसा जा रहा है। मध्यवर्गीय युवतियों की स्थिती तो निश्चित ही अस्थिर है। क्योंकि एक तरफ आधुनिक विचार से हुआ मानसिक परिवर्तन और तो दूसरी ओर तरफ समाज की परंपरागत रूढियाँ इन में जकडी भारतीय युवतियों का यथार्थ चित्रण राकेशजी ने इस एकांकी में किया है। इस प्रकार आज की मध्यवर्गीय नारी का परिवर्तित रूप और उसके गुण दोषों का विश्लेषण करना इस एकांकी/ध्वनिनाट्य का मुख्य कथ्य रहा है।

इस ध्वनिनाट्य की मुख्य नायिका है रजनी। जो मध्यवर्गीय युवतियोंकी प्रतिनिधि है, और संपूर्ण कथानक उसके इर्दीगर्द ही घूमता हुआ दिखाई देता है।

रजनी कॉलेज में पढती है और एकबार बॅडमिंटन टूर्नामेंट में विजय नामक युवक से उसकी पहचान होती है। विजय रजनी को भावना के स्तरपर बातें करते करते अपने जालमें फँसा लेता है, और उसके साथ शरीर संबंधोतंक आगे बढता है। एक दिन रजनी को मालूम होता है कि विजय शादी शुदा है तब अपने पेट में बढते बच्चे की खातिर गाँव छोडकर कलकत्ता चली जाती है। वहाँ विलोचन नामक एक युवक को भाई मानकर उसी के घर रहती है। परंतु आखिर विलोचन की पत्नी राधिका उसे घर से बाहर निकाल जाने को कहती है। रजनी घर से बाहर निकलती है। एक बच्चे को जन्म देती है और उस बच्चो को गंगा मैय्या के तटपर छोडकर स्वयं गंगा नदी में अपना प्राण देती है।

इस ध्वनिनाट्य के द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक विचारों से प्रभावित युवतियों में प्रेम पाने और उसकी खातिर बलिदान करने की ललक बढ रही है। ललक में भोली भाली युवतियाँ शिकारी प्रवृत्ति के पुरुषों के हाथ लगती है और तन मन से हारकर अनचाहें मातृत्व का बोझ ढोती रहती है। तथा अपनी माँ बापकी इज्जत बचाने के लिए दर बदर हो जाया करती है। इस कथ्य को स्पष्ठ करते करते भावुकता का नकली मुखौटा पहनकर अपना स्वार्थ सिध्द करनेवाले जंगली युवक वर्ग की वास्तविकता को भी यहाँ नाटककार ने प्रस्तुत किया है। साथ ही नाटक के अंत में, "हरि हरि हरि! ... न जाने कौन पातकिन गंगा तटपर अपना यह पाप फेंक गयी है!

शिव, शिव, शिव! न जाने कैसी कैसी हत्यारिन माँएं होती है! अब संसार में पाप का भार इतना बढ रहा है कि अवश्य भगवान का अवतार होगा ...।"[४४] जैसे संवादों से पाप की आलोचना हमारी ओढी हुई नैतिकता को उखाड कर फेंक देती है।

* उसकी रोटी;

"उसकी रोटी" ध्वनिनाट्य राकेश के ही "पहचान" कथा संग्रह में संकलित कहानी (उसकी रोटी) का ध्वनिनाट्य रूपांतर है। इस कहानी को नए सिनेमा आन्दोलन ने भी सबसे पहले फिल्माया है।

मध्यवर्गीय नारी के उदार और विशाल हृदय का परिचय देना ही इस ध्वनिनाट्य का मुख्य कथ्य और उद्देश रहा है।

इस ध्वनिनाट्य का नायक सुच्चासिंह है और उसकी पत्नी "बालों" के अबोध और भावुक व्यक्तित्व पर ही इस ध्वनिनाट्य की कथावस्तु आधारित है। सुच्चासिंह बस ड्रायव्हर है। उसे हररोज खाना पहुँचाना बालो अपना नैतिक कर्तव्य मानती है। परंतु एक दिन सुच्चयासिंह को समयपर खाना पहुँचाने में देर होती है। खाना समयपर न मिलनेपर गुस्से में आया सुच्चासिंह खाना स्वीकार नहीं करता। ऐसी स्थितिमें बालो अपने पति सुच्चासिंह के वापस आने तक वहीं रास्ते में बैठ जाती है। जंगी (प्रतिनायक) उसकी छोटी बहन की छेड छाड करता है इस बात को भी वह अपने पतिसे नहीं कहती। क्योंकी वह घर के झंझटों मे अपने पति को घसीटना नहीं चाहती। उल्टा वह कहती है - "नहीं ऐसी कोई बात नहीं थी। वह.....वह रास्ते में बातें करने लगा था।, इसलिए मुझे देर हो गयी .....।[४५] इस प्रकार एक आदर्श पत्नी के रूपमें राकेशने बालो को प्रस्तुत किया है। और यह भी राकेश का एक कथ्य हो सकता है।

साथ साथ समाज के बुरे व्यवहार जो जवान लडकियो के साथ होते है, इसका भी पर्दाफाश राकेशजी ने किया है। साथ ही इस ध्वनिनाट्यमें मूल्यों और संबंधों के जुडाव को प्रमुख रूपमें रेखांकित किया है।

* आषाढ का एक दिन ;

यह ध्वनिनाट्य राकेशजी के ही "आषाढ का एक दिन" नाटक का रेडिओ रूपांतर है। इस ध्वनिनाट्य का गहराई से अध्ययन करने के पश्चात्य कथ्य के कई कोन उभारते है। जैसे कि, प्रेम के अशरीरी सौन्दर्य का निरुपण एक कलाकार का भावनात्मक प्रेम तथा स्त्री की समर्पण वृत्ति और मिट्ठी का मोह आदि। साथ साथ मनुष्य यथार्थ से अलग नहीं रहा सकता। और जीवन की आवश्यकताएँ यथार्थ में ही पूरी की जा सकती है। अत: नाटककार का यह भी उद्देश्य रहा होगा कि मनुष्य का जीवन केवल भावना के धरातलपर नहीं चल सकता। इस नाटक के पूर्ण अध्ययनपर इस नाट्यकृति का मुख्य कथ्य सामने आता है वह है कोई भी साहित्यकार अपने अस्वाभाविक क्षेत्र में प्रवेश करें तो सही अर्थ में सफल नहीं बनता। अपने आप में अधूरा ही रहता है।

इस कृति की नायिका (मल्लिका) कालिदास (नायक) से भावना के स्तरपर प्यार करती है। जो पवित्र है, कोमल है, अनाश्वर है इसलिए वह कहती है - "मैने भावना में एक भावना का वरण किया है। मेरे लिए वह संबंध और संबंधो से बडा है। मैं वास्तव में अपनी भावना से ही प्रेम करती हूँ जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है। उसीप्रकार जब कालिदास राजकवि के पदग्रहण करने के लिए नहीं जाता तब स्वयं मल्लिका उसे समझाती है, उज्जैयणी जाने के लिए कालिदास को तैयार करती है। परंतु फिर भी उसके मन में कालिदास से बिछुडने का दु:ख है, इसीलिए उसकी आँखें गीली हो जाती है परंतु फिरभी वह कहती है - "मेरी आँखे इसलिए गीली हैं कि तुम मेरी बात नहीं समझते। वहाँ जाकर भी मुझसे दूर हो सकते हो ? वहाँ तुम्हारें प्रतिभा को विकसित होने का अवकाश कहाँ मिलेगा ?"[४७] और जब कालिदास उज्जेयणी चला जाता है तो वह रोने लगती है परंतु फिर भी अपनी माँ से कहती है, "मै रो नही रही हूँ माँ! मेरी आँखों से जो बरस रहा है, वह दु:ख नहीं है, यह सुख है माँ, सुख!"[४८] इसप्रकार एक अशरीरी प्रेम को निरुपण करना राकेशजी का एक महत्वपूर्ण कथ्य रहा है।

कालिदास कृत ऋतुसंहार को पढकर उज्जैयनी के महाराज अपने यहाँ राजकवि का पद कालिदास को देना चाहते हैं और इसलिए वह अपने आचार्य के साथ अपने सिपाहीं को गाँव में भेज देते है। कालिदास को यह समाचार मिलता है, परंतु समाचार से खुष होने के बजाय वे रुठकर जगदम्बा के मंदिर में बैठ जाता है। आखिर मल्लिका के मनाने

पर वे उज्जयनी जाकर राजकवि का पदग्रहण करते है। जब कालिदास उज्जेयनी से काश्मीर का शासन संभालने जाने लगे तो प्रियंगु उसके गाँव से हर वस्तु के नमुने साथ ले जाना चाहती है। जैसे, जानवर, वनस्पति, निर्जीव पत्थरआदि। क्योंकी जिससे कालिदास को किसकी कमी न महसूस हो। आखिर कालिदास उस राजसत्ता से ऊबकर काश्मिर छोडकर गाँव चला आता है। इसप्रकार मिट्टी का मोह यहं और एक कथ्य हमारे सामने आता है।

कालिदास राजकवि का पद ग्रहण करने उज्जैयनी चला जाता है और कवि कालिदास उसी राजसत्ता में अपने को समेट लेता है। प्रियंगु से विवाह तक करता है। और मल्लिका के मां को जो भय था वही भय आखिर खरा उतरता है। मल्लिका को वीरांगनासे वारांगना बनना पडता है। अत: भावना से जीवन की आवश्यकताएँ पूरी नहीं होती, उसे यथार्त की धरातलपर तौलना भी आवश्यक है। कालिदास कहता है - "मै अथ से आरंभ करना चाहता हूँ। यह संभवत: इच्छा का समय के साथ द्वंद्व या परंतु देख रहा हूँ कि समय अधिक शक्तिशाली है, क्योंकि ...।"[४९] और यह भी एक कथ्य राकेशजी को स्पष्ठ करता है।

कवि कालिदास कृत "ऋतुसंहार" पढकर उज्जैयनी के महाराज कालिदास को अपने राज्य का राजकवि नियुक्त करना चाहते है। कालिदास के अनचाहे वे राजकवि बन जाते है। परंतु राजकवि बनने के उपरांत उन्होंने जो कुछ लिखा। जैसे, कुमारसंभव, मेघदूत, अभिज्ञान शाकुंतल, आदि सब के सब ग्रामप्रदेश को धरातल में रखकर ही लिखा है। अर्थात नाटककार को यह भी शायद कहना है कि - साहित्यकार को अपना कार्यक्षेत्र छोडकर किसी अस्वाभाविक कार्यक्षेत्र में प्रवेश करना एक भूल है। और साक्षात कालिदास के संवाद उसके साक्षी है - "अधिकार मिला सम्मान मिला, जो कुछ मैने लिखा उसकी प्रतिलिपियाँ देशभरमें पहुँच गयी, परंतु मै सुखी नहीं हुआ। किसी और के लिए वही वातावरण और जीवन स्वाभाविक हो सकता था। मेरे लिए नहीं था। एक राज्याधिकारी का कार्यक्षेत्र मेरे कार्यक्षेत्र से भिन्न था।"[५०]

इसप्रकार राकेशजी इस ध्वनिनाटय के कथ्य में पूरीतरह सफल बने है।

* दूध और दाँत;

इस ध्वनिनाट्य से नाटककार मोहन राकेश ने अकाल के दिनों में लोगों की जो दयनीय अवस्था होती है उसका यथार्थ चित्रण करना है, और यही इसका मुख्य उद्देश्य रहा है। साथ - साथ माँ के मातृ-हृदय का दर्शन कराना और स्वार्थी लोगों के स्वार्थी एवं संकुचित विचारों का पर्दाफाश करना इस ध्वनिनाट्य का मुख्य कथ्य रहा है।

रावी का बाँध टूट जाता है। गाँव के लोग घबराए हुए "आज परलय आ गयी है" परलय। कहते हुए के गाँव छोडकर भागते हैं। इसमें राजू, प्रकाशो (पाशो), इसर, और संतोखी आदि का भी एक छोटासा परिवार है। जो इसरचाचा के कहनेपर सहारा ढूँढने भाग जाते है। परंतु बाहर कोई किसीका नहीं है, सब अपने अपने प्राण बचाने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं, छोटे छोटे बच्चे भूख से व्याकुल हो रहे हैं। संतोखी की अवस्था उनसे अलग नहीं है। वह हरवक्त "माँ भूख लगी है", की रट्ट लगा रहा है। कहीं भी रोटी नहीं मिल रही है। तभी पाशो (बच्चे की बुआ) रोटी का इन्तजाम करने के लिए कहीं चली जाती है। इतने में दर्शन नामक नरपशु संकटग्रस्त स्थिति का फायदा उठाते हुए वासना की आग बुझाना चाहता है। परंतु मातृ-हृदय एवं नैतिकता की धरोहर राजकरणी भूख से मर जाना बेहत्तर मानती है परंतु अपने पावित्र्य को महत्व देती है और उसे ठुकरा देती है।

उधर पाशो का रोटियाँ बाँटनेवाले हवाई जहाँजतक पहुंचने मे देर होती है और निराश होकर लौट रही थी कि रास्ते में दर्शन से भेंट होती है। पाशो अपने शरीर का मूल्य देकर रोटियाँ लाती है। इधर राजकरणी का छोटा बच्चा (लाली) दाँतो से अपनी माँ के सुखे -सुखे कुचों को नोचता रहता है, इतना ही नहीं उसके कुचों को काटता भी है। तब अपने कोमल -हृदयपर पत्थर रखकर, कोई अच्छाखासा दया करके बच्चे को उठालेगा इसप्रकार से विचार करके लाली को वही छोडकर सब के साथ स्टेशनपर आती है। परंतु उसीरात किसी अधेड स्त्री के पास अपने बच्चे (लाला) देखकर राजकरणी के आँचल से दूध बाहर आने लगता है। मातृत्व से प्रभावित होकर अपने बच्चे को उस अधेड स्त्री के पास से उठा लाती है। दुसरे दिन बाढ थोडा कम होता है और राजकरणी फिर अपने गाँव लौटने की सोचती है। इसप्रकार अकाल स्थिती का यथार्थ चित्रण राकेशजी ने इस ध्वनिनाट्य में किया है।

जब राजकरणी अपनी गाँव लौटने की सोचती है तब पाशो कहती है, "इस पानी में गाँव की तपफ ? ..... वहाँ पहुँच भी जायेंगे, तो भूखे रहकर कितने दिन काटेंगे। तब राजू कहती है - "मगर दूसरो के आसरे रोटी खाने के लिए घर जमिन छोडकर कब तक पडे रहेंगे ? एक फसल बरबाद हो गयी तो क्या ? अपनी जमिन में फसल तो बोनी होगी। लाली को पाकर अब मै सोच रही हूँ, पाशी, कि कितनी और चीजे है, जिन्हे हम छोड आये है। घर, गाय, खेत और जमिन, वोह सब बोल नहीं सकते और रोकर हमारे पास भी नहीं आ सकते। मगर वोह सब हमारे है, हम उन्हें छोडकर कैसे हर सकेंगे ?"[५१] इसप्रकार ऐसे बेहाल अवस्था में भी अपने पवित्र और मातृ-हृदय को जिवंत रखनेवाली माँ का चित्रण करना नाटककार का मुख्य उद्देश्य रहा है। साथ ही सच्ची भारतीय नारी किसी भी संकट में अपने पवित्रता और मातृत्व को महत्व देती है इस कथ्य को स्पष्ट किया है।

साथ ही समाज में मातृ-हृदयी लोगों के साथ साथ स्वार्थी एवं आप मतलबी लोग रहते है इस कथ्य को भी स्पष्ट किया है। क्योंकि राजकरणी जैसे मातृ-हृदयी लोग जिसप्रकार इस विश्वमें है वैसे ही दर्शन और पाशो जैसे परिस्थिति का फायदा उठानेवाले और परिस्थिति के सामने झुकानेवाले भी लोग इस पृथ्वीपर रहते हैं। इस दृष्टिसे "दूध और दाँत" यह नाम ही मुझे प्रतीकात्मक लगते है क्योंकि दूध तो समाधान और पवित्र्य का प्रतिक है तो दाँत सिर्फ काटने काम करते है। अर्थात दर्शन जैसे विकृत प्रवृत्ति के लोग सिर्फ समाज को काटने का काम करते है। इसप्रकार यह ध्वनिनाट्य अपने उद्देश्य और कथ्य में सफल बन पडा है।

* आखिरी चट्टान तक ;

यह ध्वनिनाटक राकेशजी के ही "आखिरी चट्टान तक" यात्रा वृत्तांत का रेडिओ रूपांतर है। जिसमें राकेशजीने भारत की सांस्कृतिक विविधता का दर्शन करने का प्रयत्न किया गया है।

राकेशजी गोवा से लेकर कन्याकुमारी तक की यात्रा की और उसका वृत्तांत "आखिरी चट्टान तक" नामसे प्रकाशित कराया है। राकेशजी यात्रा के दौरान जो भी सुना, देखा उसका विवरण बहुत मनोहारी, भावुकता और ईमानदारी से किया है।

इसमें सिर्फ यात्रा काही वृत्तांत नहीं मिलता अपितु इसमें संस्मरण और रेखाचित्र की विशेषताएँ भी नजर आती है। परिणाम स्वरूप यह यात्रा वर्णन रोचक बन गया है। यह ध्वनिनाटय सुनने से या पढने से राकेशजी की सूक्ष्मता की गहराई कितनी लंबी है इसका अंदाजा आता है। इस यात्रा वृत्तांत के संबंध में सुषमा अग्रवाल लिखती है, "इसमें उपन्यास की रोचकता है, कहानी सा आकर्षण और संस्मरणों की सी आत्मीयता व भावशीलता है।"[५२]

इस ध्वनिनाटय को ध्यानपूर्वक पढने के बाद एक महत्वपूर्ण कथ्य सामने आता है कि भारत की सांस्कृतिक विविधता का दर्शन कराना। स्वयं राकेशजी इस ध्वनिनाटय में लिखते है, - "सोचता रहा कि एक- एक परिवार की निजी जिन्दगी कैसे एक छोटी सी संस्कृति का रूप ले लेती है। ये छोटी छोटी संस्कृतियाँ मिलकर एक क्षेत्रीय संस्कृति का रूप ले लेती है, क्षेत्रीय संस्कृतियाँ एक राष्ट्रीय संस्कृति का और राष्ट्रीय संस्कृतियाँ एक मानवीय संस्कृति का।"[५३] अर्थात भारत की नहीं अपितु सारे मानवीय संस्कृति का प्रस्तुतिकरण इस ध्वनिनाटय का कथ्य है।

* निष्कर्ष :-

मोहन राकेशजी हिन्दी नाटय जगत में ही नहीं बल्की भारतीय नाटयविश्वमें अपना एक स्थान, एक अस्तित्व निर्माण कर चुके थे और आज भी है। उनका आषाढ का एक दिन, आधे अधूरे कादी नाटयकृतियों का भारत की कौनसी भाषा में उसका अनुवाद न हुआ हो ? यह एक खोज की बात है। सिर्फ अनुवाद ही नहीं, तो मंचन न हुआ हो ? यह भी एक खोज की बात है। अर्थात भारतीय नाटयसृष्टी को एक नया मोड देने में राकेशजी का स्थान बहुत बडा है।

एकांकियो के बारे में विचार किया जाय तो उनके नाटकों को जो हंगामा मचाया है उतनी एकांकियों ने नहीं। परंतु उतनी शक्ति उनकी एकांकियो में है यह हमे मानना पडेगा। ध्वनिनाटय तो रेडिओपर प्रसारित हो चुके है। उनके बहुतसे ध्वनिनाटय तो रेडिओपर प्रसारित हो चुके है। उनके बहुत से ध्वनिनाटय उनके ही कहानियों का ध्वनिनाटय रूपांतर है। स्वतंत्रयता के आए बदलाव को उन्होने अपने एकांकियों में स्थान दिया है और उसके अनुरूप ही उसका कथ्य प्रकट किया है।

पाश्चात्य प्रभाव के परिणामस्वरूप हम अपनी रूढीयाँ एवं परंपराएं छुपे छुपे क्यों न हो छोड रहे है। इसका दर्शन "अण्डे के छिलके" से मिलता है। "सिपाही की माँ" में युध्दविरोधी अभियान और बेटे के विरह में माँ की तडपन और उसके अनुरूप कथ्य को सही रूपमें प्रस्तुत किया है। "प्यालियाँ टुटती है" इस एकांकी से आज का मानव किसतरह दिखावटी संस्कृति को अपना रहा है और मन की संकीर्णता बढा है इसकथ्यकोस्पष्ठ करता है। "बहुत बडा सवाल" राकेशजी के प्रतिभा के उत्कर्ष का उदाहरण है। जिससे आज का मध्यमवर्गीयमनुष्य अपने सही प्रश्नो को छोडकर फिजूल बातों में ही समय व्य कर रहा है इस मुख्य कथ्य को स्पष्ठ करता है।

शायद और हं: बीज नाटक "आधे अधूरे" का ही बीज है ऐसा कहा जाता है। मनुष्य किसतरह से टूटा-बिखरा हुआ है, आधा -अधूरा है इस मुख्य कथ्य को स्पष्ट करने में सफल बने है इतनाही नहीं यह बीजनाटय राकेश के अत्युच्य प्रतिभा का प्रतिक है।

"छतरियाँ" पार्श्वनाटक राकेशजी ने भारतीय नाटयजगत में किया हुआ एक नया प्रयोग है। मनुष्य आज न चाहते हुए भी अनेक समस्याओं से घिरा जारहा है और सारे सूख से अनाथ बन रहा है इसका सफल चित्रण इस पार्श्वनाटक में हुआ है।

"रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि नाटक" संग्रह में" बहुत से ध्वनिनाटय रूपांतरित है। जैसे "आषाढ का एक दिन" नाटक का ध्वनिनाट रूपांतर है। "आखिरी चट्टान तक" यह ध्वनिनाटय यात्रा वृत्तांत का ध्वनिनाटय रूपांतर है। तो "उसकी रोटी" कहानी का ध्वनिनाटय रूपांतर है। "दूध और दौत, सुबह से पहले" आदी कहानियोंका ध्वनिनाटय रूपांतर है। तो "स्वप्नवासवदत्तम" वसंत बापट द्वारा संस्कृत से अनुवादित नाटक को ध्वनिनाटय रूपांतर है।

राकेशजीने जो भी ध्वनिनाटय लिखे हैं वे सभी रेडियो पर प्रसारित होनेवाले हैं। इसबात को ध्यान में रखकर लिखा है। और रेडिओपर प्रसारित होनेवाले ध्वनिनाटयों का मुख्य उद्देश्य "राष्ट्रीय नैतिकता" को बढाना होता है।

"रात बीतने तक" में मदिरा और मधु के चक्र में फँसे नंद का चित्रण है। और वह आखिर भारतीय संस्कृति के आगे झुक जाता है। अर्थात पाश्चात्य सभ्यतापर भारतीय सभ्यता के आगे झुक जाता है। अर्थात पाश्चात्य सभ्यतापर भारतीय सभ्यता की विजय" यही इस ध्वनिनाटय का मुख्य कथ्य है। "स्वप्नवासवदत्तम" यह ध्वनिनाटय, साहसी

लोग ही राजसत्ता का निर्माण करते हैं, व अपनी राजसत्ता कायम रखना राजाओं का नैतिक कर्तव्य है इस कथ्य को उजागर करता है। "सुबह से पहले" इस ध्वनिनाट्य में स्वतंत्रता संग्राम के प्रति भारतीय युवकोंका समर्पण इस कथ्य को प्रस्तुत करता है। "कुँवारी धरती" में आधुनातन भारतीय नारी को किस तरह से समाज के रूढी परंपरा से सामना करना पडता है इसका यथार्थ चित्रण है। "आषाढ का एक दिन" उनके ही नाटक का ध्वनिनाट्य रूपांतर है। "उसकी रोटी के दुवारा भारतीय विशाल-हृदयी स्त्री का दर्शन करना इस ध्वनिनाट्य का मुख्य कथ्य भी है और उद्देश्य भी। "दूध और दाँत" इस ध्वनिनाट्य यें, अकाल के दिनों में मनुष्य की मानसिकता किस तरहसे अखंडित और खंडित भी होती है इसका चित्रण है। साथ साथ अनेक लोग पेट की आग बुझाने के लिए स्वयं की सारी प्रतिष्ठा खाक में मिला देते हैं इस कथ्य को भी सामने लाता है। और "आखिरी चट्टान तक" इस ध्वनिनाट्य के दुवारा भारत की विभिन्न सांस्कृतिकता का दर्शन होता है, और साथ साथ मानव की विविध प्रवृत्तियों को दिखाना इस कथ्य को सामने लाता है।

इसप्रकार राकेशजी अपने सभी प्रकार के एकांकियो में कथ्य की दृष्टिसे सफल बने है। साथ ही ये एकांकी उनकी प्रतिभा का प्रारंभ, मध्य और उंचाई को भी यह स्पष्ट करते है। क्योंकि "अण्डे के छिलके" से कहीं जादा कथ्य की गहराई उनके बीजनाटको में और पार्श्वनाटक में दिखाई देता है।

टिप्पणियाँ

अध्याय तृतीय : मोहन राकेश के एकांकियों का वस्तु।

१. रामचरण महेन्द्र, एकांकी और एकांकीकार, पृ. १७।
२. वही. पृ. १७।
३. वीरेंद्रकुमार मिश्र, एकांकी उद्भव और विकास पृ. ६-७।
४. वही, पृ. ११२।
५. मोहन राकेश, अण्डे के छिलके अन्य एकाँकी तथा बीजनाटक पृ. ११२।
६. वही, पृ. २४।
७. वही, पृ. २८।
८. जीवनप्रकाश जोशी, नाटककार मोहन राकेश, पृ. ९१।
९. मोहन राकेश, अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीजनाटक पृ. ४८।
१०. डॉ. गिरीश रस्तोगी, मोहन राकेश और उनके नाटक पृ. १३१।
११. जीवनप्रकाश जोशी, नाटककार मोहन राकेश, पृ. ९२।
१२. डॉ. नरनारायण मिश्र, रंगशिल्प मोहन राकेश, पृ. ११२।
१३. मोहन राकेश, अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीजनाटक पृ. ५२१।
१४. वही, पृ. ५२१।
१५. वही, पृ. ७०।
१६. डॉ. गिरीश रस्तोगी, मोहन राकेश और उनके नाटक पृ. १३१।
१७. सुन्दरलाल कथूरिया, नाटककार मोहन राकेश पृ. १०५।
१८. डॉ. गिरीश रस्तोगी, मोहन राकेश और उनके नाटक, पृ. १३३।
१९. मोहन राकेश, अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीजनाटक पृ. ७३।
२०. नारायण केसरकर, मोहन राकेश के नाटको में नारीपात्र, पृ. ७७।
२१. जीवनप्रकाश जोशी, नाटककार मोहन राकेश पृ. ६३।
२२. डॉ. गिरीश रस्तोगी, मोहन राकेश और उनके नाटक, पृ. १२३।
२३. नारायण केसरकर, मोहन राकेश के नाटको में नारीपात्र पृ. ७७।
२४. वही, पृ. ७८।
२५. मोहन राकेश, अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीजनाटक, पृ. १०८।
२६. वही पृ पृ. ११०।

२७. वही, पृ. ११३।
२८. डॉ. गिरीश रस्तोगी, मोहन राकेश और उनके नाटक पृ. १३५।
२९. मोहन राकेश, अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज नाटक पृ. १३४।
३०. वही पृ. १३४।
३१. वही पृ. १३५।
३२. वही पृ. १३५।
३३. गिरीश रस्तोगी, मोहन राकेश और उनके नाटक पृ. १४०।
३४. मोहन राकेश, अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज नाटक पृ. १४७।
३५. वही पृ. १५१।
३६. वही पृ. १५१।
३७. वही पृ. १५५।
३८. वही पृ. १६०।
(रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनिनाटक)
३९. डॉ. नरनारायण मिश्र, रंगशिल्पि मोहन राकेश पृ. ११५।
४०. नारायण केसरकर, मोहन राकेश के नाटको में नारी पात्र, पृ. ८२।
४१. मोहन राकेश, रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनिनाटक पृ. १९।
४२. वही, पृ.
४३. वही, पृ. ४४।
४४. वही, पृ. ८४।
४५. वही, पृ. ९७।
४६. वही, पृ. १०१।
४७. वही, पृ. ११५।
४८. वही, पृ. ११७।
४९. वही, पृ. १३४।
५०. वही, पृ. १३९।
५१. वही, पृ. १६१।
५२. सुषमा अग्रवाल, मोहन राकेश व्यक्तित्व और कृतित्व पृ. ३०।
५३. मोहन राकेश, रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनिनाटक पृ. १८०।